International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor- 5.414, Volume 5, Issue 1, January 2018
Website- www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

सियाडोनी : पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत में एक व्यापारिक केन्द्र

पिंकी कुमारी

शोध–छात्रा, इतिहास विभाग

सरांश

किसी भी सभ्यता का आधार उसके व्यापार–वाणिज्य पर निर्भर करता है, जो अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण पहलू है। प्राचीनकाल से ही भारत ने व्यापार के क्षेत्र में बहुत–प्रगति की जिसके कारण वह विश्व का प्रमुख राष्ट्र बन गया। पूर्वमध्यकाल को संक्रमण का काल मानाा गया है जिसमें राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक अव्यवस्था एक नये ढांचे में ढली। इसी संदर्भ में मार्क्सवादी इतिहासकार जैसे डी. डी कौशाम्बी, रामशरण शर्मा, डी. एन. झा, बी. एन. एस यादव इत्यादि ने पूर्वमध्यकाल को आर्थिक पतन का काल माना है इनके अनुसार केंद्रीय सत्ता के विखण्डन के साथ–साथ सामन्तवाद सशक्त होता गया परिणामस्वरूप व्यापार भी कम होता गया व कृषि का विकास हुआ। इसी प्रकार अर्थव्यवस्था व व्यापारिक गतिविधियाँ एक नए स्वरूप में उभरी जो केंद्रीकृत बड़े नगरों तथा कुछ बड़े राज्य संरक्षित व्यापारियों ने बदलकर छोटे–छोटे ग्रामीण व्यापारियों व छोटे केंद्रों जैसे मण्डिपिकाओं पर आधारित हो गई।

पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत में व्यापार का एक स्वतंत्र विषय के रूप में अध्ययन रणबीर चक्रवर्ती, बी डी चट्टोपाध्याय, ब्रजेश कृष्ण आदि इतिहासकारों के अध्ययनों से निष्कर्ष निकला है कि इस काल के दौरान उत्तर भारत में व्यापार का पतन न होकर व्यापारिक गतिविधियों के स्वरूप में बदलाव हुआ था। पूर्वमध्यकालीन उत्तरभारत में 600 ई सन् के 1200 ई सन् के मध्य नये संघों का उदय हुआ तथा उत्तर भारत में सियाडोनी, कन्नौज, कपिशा, अतरजीखेड़ा, सरहिंद, जालंधर, कश्मीर, सिंध नये व्यापारिक केंद्र थे जिन्हें मण्डीपिकाएँ कहा जाता था। इस स्थान से प्राप्त गुर्जर प्रतिहारकालीन अभिलेख (907 ई. सन्) से सियाडोनी व्यापारिक केन्द्र की पुष्टि होती है। सियाडोनी व्यापारिक केन्द्र अकेले दसवीं शताब्दी के मध्य में द्रम्म मुद्राओं की विशेषताओं को दर्शाता है। प्रस्तुत शोध–पत्र 'सियाडोनी : पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत में एक व्यापारिक केन्द्र का लिखने का उद्देश्य भारत के पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत के आंतरिक केन्द्र पर प्रकाश डालना है।

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

भूमिका :

किसी भी देश की प्रगति उसकी अर्थव्यवस्था से निर्धारित होती है। इसमें विभिन्न आर्थिक संस्थाएँ और उनकी स्थिति प्रगति अथवा अवनति को सुनिश्चित करती है। ऐसी आर्थिक संस्थाओं में कृषि के बाद व्यापार–वाणिज्य का महत्वपूर्ण स्थान होता है। बौद्धकाल से ही भारत ने व्यापार के क्षेत्र में बहुत प्रगति की जिसके कारण वह विश्व की अर्थव्यवस्थाओं में प्रमुख राष्ट्र के रूप में उभरा।

इसी संदर्भ में मार्क्सवादी इतिहासकारों ने नगरों का पतन, सिक्कों का अभाव, केन्द्रीकृत राजनीतिक व्यवस्था का अभाव आदि को अर्थव्यवस्था में पतन को जिम्मेदार माना। उनके अनुसार अब नगरीय अर्थव्यवस्था के स्थान पर आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होकर उभरी। व्यापार की कमी से नगरों का भी पतन होने लगा।[2] क्योंकि शिल्पियों तथा उद्यमियों का गाँवों की ओर पलायन होने लगा।[3] नगरों की बाजार आधारित विनिमयपरक अर्थव्यवस्था के स्थान पर ग्रामीण कृषि आधारित आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था का विकास पलायन व नगरों के पतन का कारण बनी।[4] इस काल में मुद्रा का प्रचलन भी कम था इसलिए सामंती व्यवस्था में राज्य के कर्मचारियों को नकद वेतन के स्थान पर भू–अनुदान प्रदान किए जाते थे।[5] धार्मिक व धर्मेतर दोनों प्रकार की अधिसेवाओं का प्रतिदान भूमि अनुदानों के रूप में ही देना था।

दूसरी तरफ कुछ महत्वपूर्ण गैर–मार्क्सवादी इतिहासकारों जैसे – रणबीर चक्रवर्ती, ब्रजेश कृष्ण, बी. डी चट्टोपाध्याय के अध्ययनों के निष्कर्ष उपरोक्त मार्क्सवादी इतिहासकारों की उपलब्धियों से भिन्न दिखाई देते हैं। उनके अनुसार गुप्त साम्राज्य के विखण्डन के बाद एक नई व्यवस्था का जन्म हुआ था। प्राचीन बड़े व्यापारिक केन्द्रों की जगह छोटे नगरों तथा व्यापारिक केन्द्रों का उदय हुआ जिन्हें मंडीपिकाएँ कहा गया। सातवीं से दसवीं शताब्दी तक 44 भारतीय राजदूतों को विभिन्न भारतीय राजाओं द्वारा चीन भेजने का उल्लेख मिलता है[6] इससे प्रमाणित होता है रोमन साम्राज्य के पतन के बाद चीन के साथ व्यापार में वृद्धि हुई।[7] इस काल में ग्वालियर, सियाडोनी, जबलपुर, नाडोल, अहाड़ कांगडा, जालौर, भरतपुर प्रमुख व्यापारिक मण्डिपिकाएँ थी। इससे इंगित होता हे कि पूर्वमध्यकाल में व्यापार का ह्रास न होकर व्यापार का स्वरूप बदला तथा केन्द्र बदले थे जिनके साक्ष्यों का पूर्ण अध्ययन मार्क्सवादी इतिहास लेखन में नहीं है। 600 ई. सन् 1000 ई. सन् के मध्य नए व्यापारिक संघों का उदय हुआ तथा नये व्यापारिक केंद्र विकसित हुए जिन्हें उतरी भारत में मण्डिपिकाएँ कहा जाता था।[8] समराइच्चकहा में हट्ट शब्द का उल्लेख आया है। जिसका प्रयोग हाट या बाजार के रूप में किया जाता है।[9] प्रस्तुत शोध–पत्र सियोडोनी : पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत में एक व्यापारिक केन्द्र का लिखने का उद्देश्य भारत के पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत के आंतरिक केन्द्र पर प्रकाश डालना है।

मण्डिपिकाओं का महत्व :

पूर्वमध्यकालीन उतर भारत में गाँव को आत्मनिर्भर बनने और स्थानीय दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए माल को खरीदने–बेचने के लिए व्यापारिक केन्द्रों अर्थात् मण्डिपिकाओं की आवश्यकता थी। इस काल के अंतर्गत नए व्यापारिक केन्द्रों में कांगडा, ग्वालियर, भरतपुर, जबलपुर, नाडौल, गुजरात, राजस्थान, ततान्दपुर (अहाड़) पेहोवा, सियाडोनी प्रमुख व्यापारिक मण्डिपिकाएँ थी। छोटे स्तर के केन्द्रों को मण्डिपिकाएँ और बड़े केन्द्रों को महामण्डिपिकाएँ कहा जाता था।[10] इन मण्डिपिकाओं में सियाडोनी पूर्वमध्यकालीन उतर भारत में एक ऐसा ही प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था।

सियाडोनी : एक व्यापारिक केन्द्र :

सियाडोनी उतर प्रदेश के झाँसी जिले में ललितपुर के पास स्थित है पूर्वमध्यकाल में इस केन्द्र को सिरोन–खुर्द के नाम से जाना जाता था। इस केन्द्र से मिले 900 ई. सन् के अभिलेख में सियाडोनी को (सी–यू–डो–नी) दिखाया गया है। इस स्थान से गुर्जर–प्रतिहारकालीन (907 ई.सन् 968 ई. सन्) कई अभिलेख प्राप्त हुए हैं । इस व्यापारिक नगर में व्यापारियों के अलग–अलग क्षेत्र बने हुए थे। इस व्यापारिक केन्द्र के 907 ई. के एक अभिलेख में उल्लेख मिलता है कि नमक के व्यापारी एक दिन में 5 द्रग्म इकट्ठा कर लेते थे।'' इस काल में 'हट्टपति', ''शौल्किक', 'तारिक' विभिन्न राजपदाधिकारियों के भी उल्लेख मिलते हैं कि सियाडोनी व्यापारिक केंद्र रहा है। समकालीन अभिलेखों में 'हट्टपति' को बाजार का मालिक के रूप में उल्लेख मिलता है। 'शौल्किक', अधिकारी चुंगी लेने वाले कर्मचारी के रूप में नियुक्त था।[12] मण्डिपिका की नियमित आय के लिए वस्तुओं का मूल्य निर्धारित किया जाता था 906 ई सन् के अभिलेख में उल्लेख मिलता है कि सियाडोनी में महाप्रतिहार, महासामंतधिपति प्रमुख व्यापारी थे जो व्यापार के लिए नारायण भट्ट मंदिर के पास शिल्पशाला मण्डिपिका में सिक्कों का भी उपयोग करते थे।[13] यहाँ पर नमक, तेल, पान, लत्ता के पत्ते, फसलें, चीनी, कालीमिर्च, हरी सब्जियाँ सुखा हुआ अदरक आदि कृषि उत्पादों का भी व्यापार होता था। जिससे ज्ञात होता है, सियाडोनी एक व्यापारिक केन्द्र था। सियाडोनी के दक्षिण भाग में नारायण भट्टारक का प्रसिद्ध मंदिर था यहाँ पर व्यापारी मंदिर में धूप, दीपक, भोजन व तेल की भी व्यवस्था करते थे। इस व्यापारिक केन्द्र में व्यापारी सांगट का पुत्र चण्डूक प्रमुख नमक व्यापारी था इसका उल्लेख सियाडोनी अभिलेख (906 ई.सन्) में भी मिलता है।[14]

व्यापारिक वस्तुएँ :

पूर्वमध्यकाल में उतर भारत के अन्दर विभिन्न व्यापारिक केन्द्रों का आपसीं व्यापार होता था। पूर्वमध्यकाल में समाज सामंतवादी ढ़ांचे में ढला हुआ था, जिसमें एक ओर तो अत्यधिक सम्पन्न लोग थे दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्र के निर्धन लोग थे। दैनिक उपयोग की वस्तुएँ नमक, मसाले, धान, लोहा, कपड़े हाथी दाँत लाख, चँवर, कुम्भहारों द्वारा निर्मित बर्तन एवम् दूसरी वस्तुएँ एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाई जाती थी।

इस काल के अंतर्गत 907 ई. सन् के अभिलेख में उल्लेख मिलता है कि सियाडोनी मुख्यतः चीनी बनाने वालों का केन्द्र था।[15] बंगाल मखमल, पान, सुपारी के लिए प्रसिद्ध था।[16] पेहोवा व अहाड़ घोड़ों के व्यापार के लिए प्रसिद्ध केन्द्र थ्झे। सियाडोनी व्यापारिक केन्द्र में भिन्न–भिन्न भागों के व्यापरी व्यापार के लिए नियमित आते जाते रहते थे[17] और यहाँ से छोटे व्यापारी माल लेकर आसपास के क्षेत्रों में भेजते थे।

यातायात के साधनः

मनुस्मृति के भाष्यकार मेधातिथि के विवरण से ज्ञात होता है कि बैल, खच्चर, भैंस और अन्य पशुओं को सामान लादकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जाता था।[18] गुर्जर –प्रतिहारकालीन अभिलेखों से इस बात की पुष्टि होती है कि सरकार के पास अपनी नावें होती थी जिन्हें नाविकों और व्यापारियों को किराए पर दिया जाता था। पूर्वमध्यकालीन में सियाडोनी व्यापारिक केन्द्र में अन्न मापने के लिए खारि नामक मापक का उल्लेख मिलता है। 'गोणी' नामक मापक का भी वर्णन मिलता है जो चार 'खारि' के बराबर होता था। इस काल में नमक मापने के लिए 'खण्डिका' नामक मापक का उल्लेख मिलता है।[19] राजतरंगिणी और कथासरितसागर में सुवर्ण रूपक के साक्ष्य से प्रदर्शित होता है कि रूपक सिक्कों के रूप में प्रयोग किया गया है[20] रूप्य–रूपक का प्रयोग चाँदी के सिक्कों के रूप में भी हुआ है। सियाडोनी अभिलेख (900 ई. सन्) में मिहिरभेज प्रथम द्वारा चलाए गए चाँदी के 'द्रम्म' सिक्कों का भी उल्लेख मिलता है।[21]

पूर्वमध्यकाल में सियाडोनी अभिलेख से हमें द्रम्म से संबंधित नाम जैसे –पंचीयद्रम, विग्रहपालद्रंम मिलता है, इन नामों की सूची के साथ–साथ काकिणी, विशपक, पाद, रूपक शब्द भी मिलते हें।[22] इस काल में प्रतिहार अभिलेखें में द्रम, पाद, रूपक, विशोंपक, पण और काकिणी का भी उल्लेख मिलता है।[23] सियाडोनी अभिलेख में पंचीयक द्रग्म का उल्लेख मिलता है।[24] पंचीयक द्रग्म को पाँच वोदिक के भार के बराबर बताया गया है, जिसको पादिक से जोड़ा गया है। जिसका भार 11.2 ग्रेन माना गया है। पंचीयक द्रग्म को 11.2 5 त्र 56 ग्रेन माना गया है। दसवीं शताब्दी के बाद सिक्कों का प्रचलन बढ़ा जो बढ़ती हुई व्यापारिक गतिविधियों का प्रतीक है[25] । पूर्वमध्यकाल में श्रेणियाँ प्रतिष्ठित शक्तिशाली व्यापारियों के संगठन थे, श्रेणियों की जातियों को पर्याप्तता में स्वामित्व का अधिकार प्राप्त हो गया था। [26]जब उद्योग और व्यापार में लगे व्यक्तिक, संगठित होकर अपने हितों की रक्षा के लिए संस्था बनाते थे तो श्रेणी की उत्पत्ति होती है।[27]इन श्रेणियों का प्रमुख कार्य अपने उद्योग व व्यवसाय को भलीभाँति संगठित होकर उनको उन्नतशील बनाना था। श्रेणियों के पास धनी व्यक्ति निश्चित धनराशि अक्षयनीति (स्थायी पूंजी) के रूप में जमा करते थे। इसी के सन्दर्भ में 912 ई. सन् के सियाडोनी अभिलेख में उल्लेख मिलता है। नागाक नाम के व्यापारी ने शराब बनाने वाली श्रेणियों के पास 1350 वराहद्रम्म जमा किए थे।[28] इस काल में श्रेणियों का पतन न होकर श्रेणी संघों का अस्तित्व बना रहा।

इस काल के अन्तर्गत एक राज्य से दूसरे राज्य में व्यापार करने काफिलों में रहकर व्यापार करते थे। सियाडोनी अभिलेख से ज्ञान होता है सार्थवाह व्यापारियों का नेतृत्व करता था, वह कुशल–पथप्रदर्शक होता था। वर्षाकाल में व्यापारिक काफिलों के कच्ची सड़कों पर चलना काफी मुश्किल हो जाता था।[29]

पूर्वमध्यकालीन उतर भारत में अनेक प्रमुख क्षेत्रों की पुष्टि होती है जिनमें कन्नौज, अहिच्छत्र, अतरंजीखेड़ा, कश्मीर, थानेश्वर, मथुरा, सरहिन्द, पेहोवा, सियाडोनी, गोपगिरी, ततान्दपुर आदि प्रमुख व्यापारिक केन्द्र थे। कहा जा सकता है पवूर्ववत् कालों की तरह व्यापार–वाणिज्य निरंतर चलता रहा। नये छोटे व्यापारिक केन्द्रों को मण्डिपिका और बड़ें व्यापारिक केन्द्र को महामण्डिपिका कहा गया। इस काल के समकालीन स्त्रोंतों के अनुसार सियाडोनी व्यापारिक केन्द्र में व्यापार हो रहा था। इसका प्रमाण 912 ई. सन् के अभिलेख में मिलता है। इस मण्डिपिका में व्यापारी यातायात के लिए बैल, खच्चर, भैंसे, ऊँट, घोड़ों का प्रयोग माल ढोने के लिए करते थे।

प्रस्तुत शोध–पत्र में यह बात उभरकर सामने आती है कि इस काल में व्यापार का पूर्णतः पतन नहीं हुआ था, परंतु सत्ता के बिखराव के कारण और केन्द्रीकृत राजव्यवस्था न होने के कारण इसके लिखित प्रमाण कम मिलते हैं। इसके अतिरिक्त स्थानीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था का स्वरूप, व्यापारिक केन्द्र (मण्डिपिकाओं का महत्व), बढ़ते श्रेणी–संगठन, मुद्रा व वस्तु–विनिमय आधारित स्थानीय व्यापार का व्यापारिक गतिविधियों के रूप में सहसम्बन्धात्मक अध्ययन से ही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पूर्वमध्यकालीन उतर भारत में सियाडोनी प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. गुप्ता, देवेन्द्र कुमार, प्राचीन भारत में व्यापार, पृ0 123, कालेज बुक डिपो, जयपुर, 2004
2. शर्मा, रामशरण, प्राचीन भारत में नगरों का पतन, पृ0 228–229, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली–2002
3. नंदी, आर एन, प्राचीन भारत में धर्म के सामाजिक आधार, पृ0 19, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 1998
4. वही, पृ0 19–24
5. शर्मा, रामशरण, पूर्वोक्त, पृ0 232–233
6. वही, पृ0 149
7. कृष्ण, ब्रजेश, फारेन ट्रेड इन अर्ली मेडिवल इण्डिया, पृ0 7–12, हरमान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2000
8. चक्रवती, रणबीर, ट्रेड एण्ड ट्रेडर इन अर्ली इण्डियन सोसाइटी, पृ0 187–195, मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007
9. हरिभद्रसूरीकृत समराइच्चकहा, 6, पृ0 16, बम्बई, 1938
10. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग–9, पृ0 339
11. चक्रवर्ती, रणबीर, पूर्वोक्त, पृ0 189
12. उपाध्याय, वासुदेव, पूर्वमध्यकालीन भारत, पृ0 130, लीडर प्रैस आयोग, प्रयाग, 1947
13. एपिग्राफिया इण्डिका, वॉल्यूम XIV, पृ0 176

14. सिंह, रामचरित प्रसाद किंगशिप इन नॉरदर्न इण्डिया (600 ई0 सन्– 1200 ई0 सन्) पृ0 89, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1968
15. वही, पृ0 90
16. प्रकाश, ओम, प्राचीन भारत का सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ0 139, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001
17. वधोपाध्याय, एन सी, इकानॉमिक लाइफ एण्ड प्रॉगेस इन एशियंट इण्डिया, पृ0 221–222, अविनाशन प्रकाशन, इलाहाबाद 1980
18. मनुस्मृति पर मेधातिथि की टीका, 8, पृ0 290, कलकत्ताख 1932–39
19. प्रकाश, ओम, पूर्वोक्त, पृ0 174–175
20. जर्नल ऑफ द न्यूमेसमेटिक सोसायटी ऑफ इण्डिया, XIX पृ0 116, बम्बई
21. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग, XIV पृ. 178
22. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 1, पृ0 168
23. पुरी, बी. एन, प्रतिहारराज, पृ0 132–136
24. जे. ए. एस वी, जर्नल ऑफ दी एशिवाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, (न्यू सेप्लीमेंट), पृ0 34
25. यादव, बी. एन. एस., सोसायटी एण्ड कल्चर इन नॉदर्न इण्डिया इन दि टवेल्थ सेंचुरी, पृ0 381–283, सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, 1973
26. कुमार विजय, "गिल्डस : देयर पर्सोसपैक्ट एण्ड पॉजिसन इन अर्ली मेडिकल नॉर्थ इण्डिया", महर्षि इयानन्द विश्वविद्यालय रिसर्च जनरल (आट्र्स), वॉल्यूम 11, छव 2, अक्टूबर 2012
27. प्रकाश, ओम, पर्वोक्त, पृ0 193
28. वही, पृ0 164
29. गोपाल, लल्लन जी, इक्नॉमिक लाइफ इन नॉदर्न इण्डिया, पृ0 92–94, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, दिल्ली, 1965